बिखरी हुई थी। आँखें मटकी के दो छेदों के समान थी। कान टूटे हुए छाज के समान थे, पैर दाल पीसने की शिला की तरह थे और पैरों की अंगुलियाँ लोढ़ी जैसी आकृति वाली व नख सीप के समान थे। हाथी के रूप का भी वर्णन प्राप्त होता है कि उसकी कुक्षि बकरी के समान लम्बी और लटकी हुई थी। सूण्ड का अग्रभाग झुके हुए धनुष के समान मुड़ा हुआ था। पैर कछुए के समान स्थूल और चपटे थे। सर्प के रूप का उल्लेख भी उपमाओं से किया गया है कि उस सर्प के नेत्र विष और रोष से भरे हुए थे मानों काजल का पिंड हो और उसकी जिह्वा पृथ्वी के वेणी के समान लपलपा रही थी।

इस प्रकार उपासदकशांगसूत्र में विषय को अलंकारिक शैली में प्रस्तुत किया गया है, जो कथानक की भाषा में भी सौष्ठव उत्पन्न करता है और जिससे कथानक इस प्रकार प्रतीत होता है, मानों प्रत्यक्ष घट रहा हो।

(4) जैनधर्म व्यक्ति का धर्म, परिवार का नहीं

उपासकदशांगसूत्र के आठवें अध्ययन में महाशतक श्रावक का वर्णन आता है। श्रमण भगवान महावीर स्वामी की प्रथम देशना में ही वह श्रावक धर्म अंगीकार कर लेता है, परन्तु उनकी पत्नी रेवती अपने पति के आचरण में विपरीत थी। वह मद्य-मांस लोलुपी थी। उसने अपनी सौतों को भी ईर्ष्यावश मौत के घाट उतार दिया था। एक ही परिवार में रहने वाले दो व्यक्ति, एक साधना की उत्कृष्टता प्राप्त कर लेता है तो दूसरी ओर दूसरी कामोन्मत्त होकर दुर्व्यवहार के कारण निकृष्टता को प्राप्त होती है। एक स्वर्ग में जाता है, दूसरी नरक की मेहमान बनती है। अत: उपासकदशांगसूत्र में यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि जैनधर्म व्यक्ति का धर्म है, परिवार का नहीं।

(5) कथाओं में संवाद एवं तर्क

उपासकदशांगसूत्र की कथाओं में विभिन्न प्रसंगों में संवाद तत्त्वों में तर्क का आधार ग्रहण किया गया है। ऐसे संवादों में गौतम स्वामी-आनन्द श्रावक, देव और कुण्डकौलिक, महावीर स्वामी-शकडालपुत्र तथा गोशालक-शकडालपुत्र के संवाद कथानक को पुष्ट करने एवं उसे प्रवहमान बनाने के लिए दिए गए हैं। इन संवादों की यह विशेषता थी कि दोनों पक्ष अपनी बात की सत्यता सिद्ध करने के लिए अपने-अपने तर्क उपस्थित कर रहे थे। इसमें आए संवाद शंका को लेकर हैं और तर्क द्वारा शंका का समाधान पाकर मानव आत्मकल्याण के मार्ग पर आरूढ़ हो जाता है। अत: यह संवाद आत्मकल्याण की प्रक्रिया को पुष्ट करने के लिए साधन रूप होते हैं।

(6) श्रावकों का यथार्थ की ओर झुकाव

उपासकदशांगसूत्र में वर्णित दसों श्रावकों का लौकिक जीवन अत्यन्त सुखमय था। उनके पास भौतिक सुख सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में थीं। परन्तु वे विवेकशील थे। भौतिक सुखों की नश्वरता को जानते थे, इसलिए वे जीवन की यथार्थता प्राप्त करने के लिए उत्कण्ठित थे। जब उन्हें श्रमण भगवान महावीर स्वामी का सान्निध्य प्राप्त हुआ, तब उसकी अन्तर्निहित उत्कण्ठा जागृत हो उठी और उन श्रावकों ने अपनी उत्कण्ठा को क्रियान्वित रूप दिया। त्याग में, आत्मस्वरूप के रमण में वह इतना खो गए कि क्षीण होते, कृश होते शरीर की भी उन्हें चिन्ता नहीं थी। यथार्थता प्राप्त होने पर भोग का त्याग में यह सुखद पर्यवसान था।

(7) मानवीय मनोव्यापार का चित्रण

'प्रियवस्तु या प्रियव्यक्ति की प्रशंसा कर देने से व्यक्ति प्रसन्न हो जाता है।'-इस मनोविज्ञान का उपासकदशांगसूत्र में पर्याप्त वर्णन उपलबध होता है। इस सिद्धान्त का उपयोग मंखलिपुत्र गोशालक शकडालपुत्र को प्रसन्न करने के लिए करता है। जब गोशालक देखता है कि शकडालपुत्र श्रमणोपासक बन रहा है, तब उसकी श्रद्धा को दूर करने के लिए वह भगवान की प्रशंसा महामाहन, महागोप, महासार्थवाह, महाधर्मकथी एवं महानिर्यामक शब्दों में करता है, ताकि शकडालपुत्र उस पर प्रसन्न हो सके, इस प्रकार कार्य व्यापारों में मानवीय मनोविज्ञान का बहुत सुन्दर चित्रण किया गया है।

(8) समाज और संस्कृति विषयक सामग्री

उपासकदशांगसूत्र की कथाओं में समाज और संस्कृति विषयक सामग्री पर्याप्त मात्रा में है। श्रावकों का ग्रन्थ होने से इसमें श्रावकों की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति का दिग्दर्शन सम्पूर्ण आगम वाङ्मय के अध्ययन के क्रम में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

उपासकदशांगसूत्र में सामाजिक जीवन का स्वरूप वर्ण, जाति, कुटुम्ब, परिवार, पति-पत्नी, माता-पिता, स्वजन सम्बन्धी के सन्दर्भ में प्राप्त होता है।

2. उपासक पद के समानान्तर शब्द

उपासकदशांगसूत्र में उपासकों के लिए श्रमणोपासक शब्द प्रयुक्त हुआ है।[1]

1. (मुनि, मधुकर) उवा०, 1/70

अन्य जैनागमों में भी श्रमणोपासक के लिए अलग-अलग शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

श्रमणोपासक शब्द

श्रमणोपासक अर्थात् श्रमणों का उपासक। आचारांग सूत्र में श्रमणाचार का विस्तृत विवेचन है, श्रमणोपासक विषयक वर्णन नहीं मिलता है। सूत्रकृतांग सूत्र,[1] स्थानांगसूत्र,[2] व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र,[3] ज्ञाताधर्मकथासूत्र[4] एवं अन्तकृतदशासूत्र[5] में श्रमणोपासक शब्द का ही प्रयोग किया गया है।

उपासक : श्रमणोपासक

उपासना करने वाले को उपासक कहा जाता है। समवायांगसूत्र में जहाँ श्रावक की प्रतिमाओं का उल्लेख आया है, वहाँ शब्द आया है-उवासग पडिमाओ[6]।

अगार : श्रमणोपासक

अगार का अभिप्राय है कि जो गृहस्थाश्रम में रहता हुआ और कुछ छूट रखता हुआ व्रतों पालन करता है। सूत्रकृतांग[7] एवं स्थानांगसूत्र[8] में अगार शब्द का बहुल प्रयोग मिलता है।

श्रावक : श्रमणोपासक

आज श्रमणोपासक के लिए प्रचलित शब्द है-श्रावक, श्रावक शब्द के तीन अक्षर अलग-अलग कर्तव्यों का बोध कराते हैं। 'श्रा' शब्द का अर्थ है, जो जिन-प्रवचन पर दृढ़ श्रद्धा रखता हो, 'व' का अर्थ है विवेक बुद्धि वाला और 'क' शब्द से संयम पालन करने वाले को श्रावक कहते हैं। उपासकदशांगसूत्र के द्वितीय अध्याय में कामदेव के प्रकरण में प्राकृत रूप 'सावय' शब्द का प्रयोग हुआ है।[9]

1. सूत्र०सू०, 2/7/843
2. स्था०सू०, 4/3/428
3. व्याख्या०सू०, 7/1/8
4. ज्ञाता०सू०, 5/29
5. अन्त०सू०, 6/3/10
6. सम०स०, 11/71
7. सूत्र०सू०, 11/1/19
8. स्था०सू०, 2/1/107
9. (मुनि आत्माराम) उपा०सू०, 2/90
   व्याख्या०सू०, 2/1/13, ज्ञाता०सू० 11/7

श्रावक के लिए अणुव्रती, देशव्रती, देशसंयमी और सागार शब्दों का प्रयोग भी परवर्ती साहित्य में मिलता है। अणुव्रतों-अहिंसा-सत्य आदि व्रतों का पालन करने से सद्गृहस्थ श्रावक को अणुव्रती कहा जाता है। श्रावक एक देश संयम का आचरण करने वाला होने से वहीं एक देशव्रती, देशसंयमी भी कहलाता है। पूर्णव्रती अथवा महाव्रती तो साधु-सन्त अथवा मुनिगण ही होते हैं।

आगार पद घर का वाचक है जो सद्गृहस्थ घर में रहकर संयम का पालन करता है उसे सागार भी कहा गया है। इसी सागार शब्द की महत्ता को ध्यान में रखकर पंडित आशाधर ने सागरधर्मामृत नाम के श्रावकाचार ग्रंथ की रचना की है।

इस प्रकार उपासक, श्रमणोपासक अथवा श्रावक पद अपने में महत्त्वपूर्ण है कारण यह कि जैनों द्वारा भले ही उपासकदशांगसूत्र को अधिक सम्मान न दिया गया हो फिर भी परवर्ती आचार्यों, विद्वानों, लेखकों ने आगम संगायन के बाद श्रावकों वा उपासकों के लिए आचार धर्म पर अपनी रचनाओं में कहीं संक्षिप्त रूप में तो अधिकांशतः विस्तृत रूप से गहन चिन्तन किया है।

3. उपासकदशांगसूत्र : विषयगत परिचय

तीर्थंकर का तीर्थंकरत्व चार विशाल तीर्थों-साधु-साध्वी एवं श्रावक-श्राविका की स्थापना में निहित है। इस प्रकार जहाँ वे अपने तीर्थ में साधु-साध्वी को उच्च स्थान दिए होते हैं, वहीं श्रावक और श्राविका को भी सम्मान प्रदान करते हुए उन्हें समान मंच पर बैठाते हैं। इसी में उनकी महानता भी झलकती है।

निश्चय ही तीर्थंकर की धर्मदेशना का मुख्य उद्देश्य धर्म तीर्थ को संस्थापित करना होता है। धर्मतीर्थ की रचना कर लेने के उपरान्त तीर्थंकर का तीर्थंकरत्व सार्थक होता है। उसी धर्मतीर्थ के लिए केवलज्ञान के धारी तीर्थंकर भगवान् अपने ज्ञान के आलोक में दृष्टिगोचर हुए तथ्यों का निरूपण करते हैं।

तीर्थंकर भगवान् द्वारा प्ररूपित द्वादशांगी का सातवां अंग उपासकदशांगसूत्र है। इसमें भगवान् महावीर स्वामी के सम सामायिक दश उपासकों का पवित्र चरित्र निबद्ध है। अतः इसका नाम 'उपासकदशांग' है। उपासकदशांग में उपासक शब्द जैन गृहस्थ के लिए व्यवहृत हुआ है। दशा शब्द दस संख्या एवं अवस्था का सूचक है। इस प्रकार उपासकदशांगसूत्र में दस उपासकों का जीवन वृत्त मिलता है।

वैसे भगवान् महावीर स्वामी के उपासकों की संख्या लाखों में मिलती है, जिनमें प्रमुख शंख और पुष्कली श्रमणोपासक थे, परन्तु उपासकदशांगसूत्र में दस

श्रावकों का जीवन कुछ विशेष घटनाओं और उपसर्गों के कारण अत्यन्त प्रेरणास्पद माना गया है कारण यह कि इन्होंने बीस वर्षों तक निवृत्ति-मार्ग पर आचरण करते हुए ग्यारह प्रतिमाओं का सम्यक् परिपालन किया और अन्त में सल्लेखना द्वारा देह का त्याग करके सौधर्म देवलोक में चार पल्योपम की आयु प्राप्त की। वहाँ से चलकर सब महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होंगे और सिद्धि प्राप्त करेंगे।

दश उपासकों के नाम इस प्रकार हैं–आनन्द, कामदेव, चूलणीपिता, सुरादेव, चुल्लशतक, कुण्डकोलिक, शकडाल पुत्र, महाशतक, नन्दिनी पिता, लेयिका पिता। स्थानांगसूत्र से इन नामों की पुष्टि हो जाती है।[1] उपासकदशांग में दसवां नाम सालिहीपिया आया है।[2] समवायांगसूत्र[3] और नन्दीसूत्र[4] में अध्ययनों की संख्या का निर्देश किया गया है, किन्तु नामों का निर्देश नहीं किया है।

प्रस्तुत आगम में एक श्रुतस्कन्ध, दस अध्ययन, दस उद्देशनकाल, दस समुद्देशन काल कहे हैं।[5] उपासकदशांग में वर्णित उपासक विभिन्न जाति एवं व्यवसाय करने वाले हैं, उनके गाथापति से श्रावक बनने एवं स्वर्गगामी होने तक की चर्या का वर्णन इस प्रकार है–

(1) आनन्द श्रावक

प्राचीन काल में वैशाली के निकट ही वाणिज्य ग्राम नामक नगर था। वहाँ जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगर में आनन्द गाथापति निवास करता था। करोड़ों की सम्पत्ति होने के कारण समाज में वह प्रतिष्ठित एवं सम्मानित था। बुद्धिमान, व्यवहार कुशल एवं मिलनसार होने से यह सभी का विश्वसनीय था। उपासकदशांगसूत्र में आनन्द गाथापति के लिए मेढ़ीभूए[6] विशेषण मिलता है अर्थात् वह परिवार के लिए केन्द्र स्तम्भ था।

आनन्द गाथापति की शिवानन्दा भार्या उसे अत्यन्त प्रिय थी, वह उसके प्रति अनुरक्त एवं अवरिक्त थी।[7] आनन्द के अन्य पारिवारिकजन भी गुण सम्पन्न एवं सुखी थे।

1. स्था०सू०, 10/112
2. उपा०सू०, 269
3. सम०सू०, 538
4. न०सू०, 51, पृ० 257
5. वही।
6. उपा०सू०, 1/5
7. आणदस्स गाहावइस्स डट्ठा, आणदेण गाहावइणा सद्धि
   अणु-रत्ता, अविरत्ता। उपा०स०, 1/6

एक बार उनके नगर के बाहर दूतिपलाश चैत्य में भगवान् महावीर स्वामी पधारे। नागरिक लोग भगवान् के दर्शन करने गए। राजा जितशत्रु व हजारों की संख्या में जनता दर्शनार्थ व उपदेश श्रवणार्थ उपस्थित हुई। आनन्द गाथापति भी भगवान् महावीर के शुभागमन का संवाद सुनकर अति प्रसन्न हुआ और सुसज्जित होकर भगवान् के समोसरण में पहुँचा। उपदेश श्रवण कर उसने भगवान् से निवेदन किया–भगवन्! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धाशील हूँ। उसमें मेरी श्रद्धा और रुचि है। जैसा आपने कहा, वह सत्य है।[1] आपके पास बहुत से राजा, युवराज, सेनापति, नगर रक्षक, मांडलिक, कौटुम्बिक, श्रेष्ठी, सार्थवाह मुण्डित होकर आगार धर्म से अणगार धर्म को ग्रहण करते हैं। मैं श्रमण धर्म धारण करना चाहता हूँ। महावीर स्वामी ने कहा–जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो। आनन्द गाथापति ने द्वादश व्रतों को अंगीकार किया[2] और आनन्द गाथापति अब श्रावक आनन्द बन गया।

आनन्द श्रावक की प्रेरणा से उसकी धर्मपत्नी शिवानन्दा ने भी भगवान् के समक्ष द्वादश व्रत ग्रहण किए। श्रावक बनने के चौदह वर्ष पश्चात् अपने ज्येष्ठ पुत्र को उत्तराधिकारी घोषित कर निवृत्ति से रहने लगे। उस निवृत्ति जीवन में उसने श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ[3] अंगीकार की।

आनन्द ने ध्यान, स्वाध्याय, चिन्तन और तपश्चरण के द्वारा श्रावक प्रतिमाओं की सफल अराधना की। इस दीर्घकालीन तपश्चरण से इसका शरीर सूत्र गया, शक्ति और बल क्षीण हो गया फिर भी उसकी धर्म चेतना जागृत थी। धर्म जागरण करते हुए श्रावक आनन्द ने चिन्तन किया–अब मेरा शरीर अस्थि पिंजर मात्र रह गया है, रक्त-मांस सूख गए हैं, फिर भी अभी तक मुझ में उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम एवं श्रद्धा है। एतदर्थ प्रातः होते ही शेष जीवन के लिए भक्त-पान का त्याग करके संलेखना-संथारा[4] पूर्वक मृत्यु की कामना न करते हुए धर्म जागृति के साथ विचरण करना मुझे श्रेयस्कर है। सल्लेखना काल में उसे शुद्ध अध्यवसाओं के द्वारा अवधि ज्ञानावरणीय कर्म[5] के क्षयोपशम से विशिष्ट अवधिज्ञान उत्पन्न हुआ।

1. सद्दहामि णं भंते! णिग्गण पावयणं, पत्तियामि णं भंते! णिग्गंथं पावयण रोएमि णं, भंते!
   निग्गथं पावयण, एवमेय, भंते। तहमेय, भते। अवितहमेय।
   भते। इच्छियमेय, भंते। पडिच्छियमेय, भते। इच्छिय-पडिच्छियमेयं भंते।।
   उपा०सु०, 1/12
2. उपा०सू०, 1/13-39
3. उपा० सू०, 1/67-68
4. वही, 1/70
5. वही, 1/71

गधधर गौतम की क्षमा याचना

एक बार विचरण करते हुए भगवान महावीर स्वामी पुन: वाणिज्यग्राम में पधारे। गौतम स्वामी भगवान् की आज्ञा लेकर बोले (दो व्रत) के पारणे के लिए गोचरी लेने नगरी में पधारे और आनन्द श्रावक के संथारे की बात सुनी। वे स्वयं चलकर वहाँ पौषधशाला में आनन्द श्रावक के पास आए। आनन्द का शरीर धन्ना अणगार की तरह[1] अत्यन्त कृश हो चुका था। अपने स्थान से इधर-उधर जाना उसके लिए अशक्य था। आनन्द ने गौतम स्वामी से निकट पधारने की प्रार्थना की। गौतम स्वामी निकट गए, उसने सभक्ति वन्दन नमस्कार किया और पूछा-'भगवन्! क्या गृहस्थ को अवधिज्ञान हो सकता है?' गौतम स्वामी ने कहा-'हाँ, आनन्द! हो सकता है।' आनन्द ने कहा-'भगवन्! मुझे अवधिज्ञान हुआ है, जिसके कारण मैं पूर्व, पश्चिम और दक्षिण दिशा में लवण समुद्र के भीतर पाँच सौ योजन तक, उत्तर दिशा में चुल्ल हिमवंत पर्वत तक, ऊर्ध्व लोक में सौधर्म कल्प तक और अधोदिशा में लोलुपाच्युत नामक नरकावास तक देख रहा हूँ।[2] गौतम स्वामी ने कहा-'आनन्द! श्रावक को अवधिज्ञान तो होता है, पर इतना विशाल नहीं। अत: आप इस कथन की आलोचना करें।'

गौतम स्वामी से आनन्द ने विनम्र भाव से कहा-'हे भगवन्! क्या जिनशासन में सत्य, तात्त्विक और सद्भुत भावों के लिए भी आलोचना की जाती है?' गौतम स्वामी ने कहा-'ऐसा तो नहीं है।' आनन्द ने पुन: निवेदन किया-'हे भंते! मैंने जो निवेदन किया है, वह सत्य है। अत: आप ही इस विषय में आलोचना कीजिए।'

आनन्द श्रावक के कथन में दृढ़ता थी, जिसे सुनकर गौतम स्वामी शंकाशील हो गए और सीधे भगवान् के पास पहुँचकर आहार दिखलाया और सम्पूर्ण यथार्थ कह भगवान् महावीर स्वामी से पूछा-भगवन्! आनन्द को प्रायश्चित्त करना चाहिए या मुझे।

भगवन् ने कहा-हे गौतम! तुम्हें ही प्रायश्चित्त लेकर शुद्धि करनी चाहिए एवं आनन्द श्रमणोपासक से इस प्रसंग में क्षमायाचना करनी चाहिए। इन्द्रभूति गौतम उल्टे पांव आनन्द श्रमणोपासक के पास आए और बोले-आनन्द! मैंने तुम्हारे यथार्थ कथन की अवहेलना की थी। अत: मैं तुमसे क्षमा याचना करता हूँ।

1. अनु०, द०, स०, 3/18
2. ममवि गिहिणो गिहज्झाव सवस्स ओहिमाणे समुप्पण्णे-परत्थिमे णं लवण समुद्दे पच्चजोयण-समाइं जाव लोलुयच्चुयं नरयं जाणामि पासामि।
उपा०, सू०, 1/83

इसके बाद भगवान् महावीर स्वामी विहार कर गए और आनन्द अपने व्रतों, प्रतिमाओं का सम्यक् प्रकार से पालन करने लगा। अन्त में एक मास की सल्लेखना की। मरकर वह सौधर्म देवलोक में चार पल्योपम की स्थिति अर्थात् आयु वाला देव बना। वहाँ से महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्धगति प्राप्त करेगा।

(2) कामदेव श्रावक

दूसरे अध्ययन में कामदेव श्रमणोपासक का वर्णन है। पूर्व विहार में चम्पानगरी में जितशत्रु नाम का राजा राज्य करता था। उस नगरी में कामदेव नामक गाथापति रहता था, जो समाज में अग्रगण्य था। लोक उसकी बात को बहुमान देते थे। उसके भद्रा नाम की सुयोग्या पतिपरायणा पत्नी थी। कामदेव गाथापति की सम्पत्ति आनन्द गाथापति से डेढ़गुणी थी।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के चम्पानगरी में पदार्पण पर कामदेव भी भगवान् की सेवा में पहुँचा। धर्म देशना श्रवण कर वैभवशाली कामदेव का हृदय त्याग व तप प्रधान जीवन जीने के लिए प्रेरित हुआ। उसने भी आनन्द गाथापति की तरह श्रावक के द्वादश व्रत स्वीकार किए और अन्तिम समय में सांसारिक कार्यों से निवृत्त होकर पौषधशाला में अपना पवित्र जीवन बिताने लगा।

एक समय कामदेव की साधना के बीच संकट एवं परीक्षा की घड़ी उपस्थित हो गई। वह पौषधशाला में पौषध लेकर आत्मध्यान में तन्मय हो रहा था। मध्यरात्रि में एक मायावी देव भयानक पिशाच का रूप धारण कर हाथ में नंगी तलवार लेकर प्रकट हुआ और कामदेव को डराते-धमकाते हुए कहा-कामदेव! तू मोक्ष की मृगतृष्णा में अपने जीवन को बर्बाद कर रहा है। मेरे कहने से धर्म को छोड़, भोग-उपभोग का आनन्द लूट। यदि तू मेरी बात स्वीकार नहीं करेगा, तो मैं इसी तलवार से तेरे टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।

श्रमणोपासक कामदेव अपनी साधना में मग्न रहा। दैत्य ने उस पर क्रूर प्रहार किए, फिर भी वह धर्म चिन्तन में लीन रहा। दैत्य ने हाथी एवं सर्प बनकर उसे भयंकर वेदनाएँ दी, पर वह विचलित न हुआ। वह शांत भावों से अपनी श्रद्धा एवं साधना में अडोल रहा। आखिर मानव के आगे दानव की हार हुई। क्रूरता पर शांति ने विजय प्राप्त की। कामदेव ने धर्म दृढ़ता से परीक्षा में उत्तीर्णता पाई।

एक बार भगवान् महावीर स्वामी विचरते हुए उस नगरी में पधारे। प्रात:काल कामदेव ने पौषधपूर्ण किया। शुद्ध सभा योग्य वस्त्र धारण किए एवं उपवास का

पारणा किए बिना ही जनसमूह के साथ भगवान् के दर्शन करने आया। भगवान् महावीर ने कामदेव की धर्म प्रशंसा करते हुए श्रमण-श्रमणियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि एक श्रमणोपासक गृहस्थ भी धर्म की दृढ़ आस्था रख सकता है, तुम्हें भी इसी प्रकार संयम धर्म में दृढ़ रहना चाहिए।

तदनतर कामदेव ने आनन्द श्रमणोपासक के समान श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ स्वीकार की और सम्यक् आराधना की। अंत में एक महीने के संथारे से समाधिमरण प्राप्त कर प्रथम देवलोक में उत्पन्न हुआ। वहाँ से चार पल्योपम की आयु पूर्ण कर महाविदेह में सिद्ध होगा।

शेष वर्णन आनन्द के समान ही समझना। 14 वर्ष सामान्य श्रावक पर्याय और 6 वर्ष निवृत्त साधनामय जीवन में, इस प्रकार कुल 20 वर्ष की श्रमणोपासक पर्याय का कामदेव श्रावक ने पालन किया।

(3) चुलनीपिता श्रावक

भारत की प्रसिद्ध और समृद्ध वाराणसी नगरी में चुलनीपिता नाम का गाथापति रहता था। उसकी पत्नी का नाम श्यामा था। भद्रा उसकी माता थी। चुलनीपिता की सम्पत्ति आनन्द और कामदेव से भी अधिक थी। आठ करोड़ सुनैया निधान में थी एवं उतनी-उतनी व्यापार में और घर खर्च में अलग-अलग थी। गौधन की 80 हजार की संख्या में था। इस प्रकार चुलनीपिता एक वैभवशाली सम्पन्न पुरुष था। भगवान् महावीर जब वाराणसी नगरी में पधारे, तब चुलनीपिता ने धर्मोपदेश श्रवण कर श्रावक व्रत अंगीकार किए। उसने भी चौदह वर्ष गृहस्थ धर्म में रहने के बाद निवृत्ति साधना स्वीकार की।

एक बार पौषधशाला में उपवास युक्त पौषध स्वीकार करके चुलनीपिता आत्म-साधना रत था। अर्धरात्रि के समय देव हाथ में तलवार लेकर प्रकट हुआ और बोला-'अरे ओ चुलनीपिता! यह धर्म-कर्म सब छोड़ दो, नहीं तो अभी तुम्हारे सामने तुम्हारे बड़े लड़के को तलवार से काटकर कड़ाह में उबाल दूँगा और फिर उसके गर्म खून और मांस तुम्हारे ऊपर छिड़कूंगा।' चुलनीपिता ने भावुकता पर विवेकी की लगाम रखी, अपनी साधना में स्थिर रहने का निर्णय ले लिया। 2-3 बार चेतावनी देने के बाद देव ने वैसा कृत्य कर दिया और पुत्र के गर्मागर्म खून व मांस का श्रावक पर छिड़काव किया। चुलनीपिता ने उस भीष्ण कृत्य को आंखों से देखते हुए भी और

शारीरिक वेदना में अपने मन को क्षुब्ध नहीं होने दिया, किन्तु अध्यात्मज्ञान एवं वैराग्यपूर्ण अध्यवसायों के द्वारा शांतिपूर्वक साधना में रत रहा

देव का क्रोध उसकी शांति के कारण भड़कता ही गया। देव ने एक-एक करके तीनों पुत्रों के साथ वैसा ही बीभत्स कृत्य किया। लेकिन चुलनीपिता अडिग बने रहे।

अन्त में देव ने चुलनीपिता की माता भद्रा के साथ भी ऐसा कृत्य करने की धमकी दी। अब चुलनीपिता का धैर्य टूट गया। उसकी आत्मदृढ़ता अब क्षुब्धता में परिवर्तित हो गई। माता की ममता के कारण वह साधना में हार खा गया। अपनी पौषध की मर्यादा उल्लंघन कर देव को पकड़ने का संकल्प किया और पकड़ने के लिए ज्यों ही हाथ फैलाए, तो देव आकाश में अन्तर्ध्यान हो गया। आवाज सुनकर उसकी माता आई और घटना की जानकारी होने पर उसने पुत्र से कहा कि यह तो केवल देव माया थी, सभी पुत्र सुरक्षित हैं। क्रोध करके तुमने अपनी साधना में दोष लगाया है। यह तुम्हारी भूल है, इसकी शुद्धि कर लो। चुलनीपिता ने माँ के कथन को शिरोधार्य किया और प्रायश्चित्त स्वीकार कर अपनी साधना में लग गए।

बीस वर्ष की कुल श्रावक पर्याय का पालन किया। श्रावक प्रतिमाओं की आराधना की। अंत में एक मास के संथारे से प्रथम देवलोक में उत्पन्न हुआ। वहाँ उसकी चार पल्योपम आयु है। वह भी महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध होगा।

(4) सुरादेव श्रावक

वाराणसी नगरी में सुरादेव नाम का गाथापति रहता था। वह बहुत समृद्धिशाली था। छः-छः करोड़ का धन उसके व्यापार आदि में लगा था। उसकी पत्नी का नाम धन्या था।

आनन्द के समान उसने सम्यक् दर्शन पूर्वक द्वादश व्रतों की आराधना की। एक बार वह सुरादेव पौषधशाला में पौषध व्रत में लीन था कि उसी समय एक मिथ्यात्वी देव अर्धरात्रि में आया और चुलनीपिता की तरह उसको भी धमकी दी और बीभत्स कृत्य किया, तीनों पुत्रों का वध कर दिया। साथ ही गर्मागर्म खून मांस के छिड़काव से श्रावक सुरादेव को भी दारुण कष्ट दिया किन्तु सुरादेव निर्भीकता के साथ साधना में लगा रहा। देव ने नया उपाय निकाला और बोला कि तुम यह सब धर्म कर्म छोड़ दो अन्यथा तुम्हारे शरीर में कोढ़ आदि सोलह बड़े-बड़े भयानक रोग पैदा कर दूंगा, जिससे तुम्हारा शरीर सड़ जाएगा और तुम महान् दुःखी हो जाओगे।

रोगों की असीम वेदना की कल्पना से उसका हृदय क्षुब्ध हो गया, घबरा गया और उसका धैर्य टूट गया। इस कारण चुलनीपिता के समान सुरादेव भी अन्त में साधना से विचलित हो गया और पत्नी धन्या के द्वारा प्रेरणा पाकर उसने तत्काल अपने व्रत की शुद्धि की। भूल स्वीकार करके पुनः धर्मसाधना में लग गया एवं उत्तरोत्तर वृद्धि करते हुए श्रावक प्रतिमाएँ स्वीकार की। बीस वर्ष की श्रावक पर्याय का पालन कर वह भी एक मास के संथारे से प्रथम स्वर्ग में उत्पन्न हुआ फिर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मुक्ति प्राप्त करेगा।

(5) चुल्लशतक श्रावक

आलम्भिका नगरी में चुल्लशतक नामक गाथापति रहता था। इसके जीवन का एवं साधना का सम्पूर्ण वर्णन भी सुरादेव के ही समान है। वह देव के द्वारा सम्पूर्ण धन नष्ट करके दरिद्र बना देने की धमकी में साधना में फिसल गया और बहुला नामक अपनी भार्या की प्रेरणा से प्रायश्चित्त कर शुद्ध हुआ। अन्त में उसने यथार्थ धर्म की आराधना कर पण्डितमरण प्राप्त किया। एवं प्रथम देव लोक में उत्पन्न हुआ। वहाँ से च्युत होकर महाविदेहक्षेत्र में जन्म लेकर चरम लक्ष्य सिद्धि को प्राप्त करेगा।

(6) कुण्डकोलिक श्रावक

प्राचीन काल में काम्पिल्यपुर नामक नगर था। कुण्डकोलिक नामक एक सेठ वहाँ निवास करता था। धन सम्पत्ति उसकी सुरादेव श्रावक के समान थी। उसने भी भगवान् महावीर से श्रावक धर्म ग्रहण किया था।

एक बार मध्याह्न में वह अशोकवाटिका में बैठा हुआ धर्मचिन्तन कर रहा था। उसी समय एक देव आया। उसने कहा–देखो, श्रमण भगवान् महावीर द्वारा कथित धर्म उपयुक्त नहीं है क्योंकि उसमें उत्थान और पराक्रम पर बल दिया गया है जबकि सब कुछ तो नियति के आधार पर ही चलता है। गोशालक का धर्म सिद्धान्त सुन्दर है, युक्तियुक्त है। जिसमें उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पराक्रम कुछ भी नहीं है, जो कुछ है, वह नियति है। अतः महावीर की धर्मप्रज्ञप्ति को छोड़कर गोशालक की धर्म प्रज्ञप्ति स्वीकार करो।

कुण्डकोलिक ने प्रतिवाद किया–'देव! जो तुम्हें यह दिव्य ऋद्धि आदि प्राप्त हुई है, क्या वह बिना पुरुषार्थ के मिली है?' देव ने कहा–'हाँ!' कुण्डकोलिक ने कहा–'जितने भी पुरुषार्थहीन हैं, वे आपके कथनानुसार देव बनने चाहिए, पर ऐसा

क्यों नहीं होता?' देव के पास उस तर्क का कोई उत्तर न था, वह निरुत्तर हो गया और जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में चला गया।

भगवान् ने कामदेव के समान अपनी परिषद् में कुण्डकोलिक श्रावक की प्रशंसा की एवं सभी श्रमण श्रमणोपासक आदि को ज्ञान चर्चा में देव से नहीं घबराने के आदर्श को सम्मुख रखने की प्रेरणा दी और कहा कि इसी तरह सभी को ज्ञान एवं अनुभव में विशाल बनकर धैर्य के साथ तर्कों का समाधान करने का प्रयत्न करना चाहिए।

कुण्डकोलिक श्रमणोपासक ने भी चौदह वर्ष में अपनी जिम्मेवारियाँ समेट लीं। समारोह के साथ पुत्र को कार्यभार सौंपकर निवृत्ति साधना धारण की। प्रतिमाओं का आराधन किया। अन्त में एक महीने के संथारे से पंडितमरण प्राप्त किया। कुण्डकोलिक प्रथम स्वर्ग में चार पल्योपम की आयु पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्र से मुक्ति प्राप्त करेगा।

(7) सकडालपुत्र श्रावक

पोलासपुर नगर में सकडालपुत्र नामक एक कुम्भकार रहता था। आजीवक आचार्य गोशालक का अनुयायी था। वह अर्थदृष्टि से भी सम्पन्न एवं समृद्ध था। उसके व्यापार में 1-1 करोड़ सोनैया प्रमाण धन लगा हुआ था। दस हजार की संख्या में पशु धन था। उसके मिट्टी के बर्तन बनाने की पाँच सौ कर्मशालाएँ थीं, और उन बर्तनों को बेचने की व्यवस्था उसने नौकरों द्वारा राजमार्ग एवं अनेक सार्वजनिक स्थानों पर कर रखी थीं। वह सकडालपुत्र नामक कुम्भकार अपने धर्म सिद्धान्तों के प्रति भी दृढ़ आस्थावान था एवं तदनुसार धर्मोपासना में अपना समय भी लगाता था।

एक दिन दोपहर के समय वह अपनी अशोकवाटिका में धर्माराधन में लगा था। उसी समय एक देव आया और आकाश में ठहरकर बोला कि कल यहाँ सर्वज्ञ सर्वदर्शी भगवान् पधारेंगे। तुम उनकी वंदना पुर्यपासना करना एवं उन्हें ठहरने के लिए स्थान आदि का आमंत्रण करना। इस सूचना को सकडालपुत्र ने अपने धर्म प्रणेता गोशालक के लिए समझा।

इस प्रकार देव से प्रेरणा प्राप्त कर वह महावीर को वन्दन करने गया। महावीर की धर्मदेशना सुनकर उसे श्रद्धा जागृत हुई। उसकी प्रार्थना को सम्मान देकर भगवान् उसकी कुंभशाला में पधारे। घड़े बनते देख भगवान् ने पूछा–'ये घड़े कैसे बनते हैं?' उसने घटनिर्माण की सारी प्रक्रिया बताई। भगवान् ने पुनः पूछा कि यह

प्रक्रिया पुरुषार्थ और प्रयत्न से हुई या नियति से? सकडालपुत्र से उत्तर दे दिया–'नियति से ही हुआ है, पुरुषार्थ का कोई महत्त्व नहीं है।'

भगवान् ने पुनः कहा कि यदि कोई तुम्हारे इन सैंकड़ों बर्तनों को बिखेर दे, फोड़ दे, नष्ट कर दे एवं तुम्हारी भार्या के साथ बलात्कार करे, तो तेरे मतानुसार ये सब कुछ नियतिकृत है। ऐसा करने में उस मनुष्य का कोई अपराध नहीं है। यदि तू उसे अपराध का दण्ड देता है तो फिर नियतिवाद को मानना कहाँ तक उचित है? भगवान् के हृदयग्राही, तर्कयुक्त कथन से वह प्रभावित होकर महावीर का अनुयायी हुआ एवं द्वादश व्रत अंगीकार किए। गोशालक ने जब उसके मत-परिवर्तन की बात सुनी एवं जानी, तब वह वहाँ आया। गोशालक ने विविध उपमाओं से महावीर स्वामी की स्तुति कर उसको अपनी और आकर्षित करने का प्रयत्न किया, पर सफल न हो सका।

एक बार पौषध में अर्धरात्रि के समय सकडालपुत्र के पास एक देव आया और धर्म क्रिया, व्रत आदि को छोड़ने के लिए कहा और धर्म न त्यागने पर उसके पुत्रों को मारने की धमकी दी, परन्तु श्रावक सकडालपुत्र अविचल रहा। देव ने तीनों पुत्रों को मारकर फिर अग्निमित्रा भार्या को मारने की धमकी दी। इस पर सकडालपुत्र की व्रत निष्ठा डगमगा गई, क्रोध जगा और देव को पकड़ने का प्रयत्न करते हुए वह साधना से च्युत हुआ। देव लुप्त हो गया। आवाज सुनकर अग्निमित्रा भार्या ने आकर व्रत में स्थिर किया। सकडालपुत्र ने प्रायश्चित्त लेकर शुद्धि की।

जीवन के अंतिम क्षणों में सकडालपुत्र ने भी निवृत्तिमय साधना स्वीकार की। श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का पालन किया। बीस वर्ष की श्रावक पर्याय पूर्ण करके एक मास के संथारे से प्रथम स्वर्ग में गया और महाविदेह से मुक्त होगा।

(8) महाशतक श्रावक

राजगृह नगर अपने समय का प्रसिद्ध नगर था। राजा श्रेणिक वहाँ का शासक था। वहाँ महाशतक नाम का गाथापति रहता था। धन, सम्पत्ति, वैभव, प्रभाव, मान-सम्मान आदि की अपेक्षा नगर में उसका बहुत ऊँचा स्थान था। उसके पास कांस्य पात्र के माप की अपेक्षा 24 करोड़ सोनैया का धन था।

उस समय के रिवाजों के अनुसार महाशतक का तेरह श्रेष्ठी कन्याओं के साथ विवाह हुआ। उन कन्याओं को अपने पिता की तरफ से विपुल सम्पत्ति आदि प्रीतिदान में मिली थी। उन तेरह स्त्रियों में रेवती सबसे प्रमुख थी। पितृ सम्पत्ति की

अपेक्षा वह सबसे अधिक धनाढ्य थी। इस प्रकार महाशतक सांसारिक दृष्टि से महान् वैभवशाली और अत्यन्त सुखी था किन्तु वैभव एवं सुख-विलास में वह खोया नहीं था।

संयोगवश एक समय महावीर स्वामी राजगृह में पधारे। महाशतक गाथापति भी दर्शन करने के लिए समवसरण में उपस्थित हुआ। उपदेश श्रवण किया, जिससे उसे आत्मप्रेरणा मिली। उसने श्रावक के बारह व्रत धारण किए।

महाशतक श्रमणोपासक के उपासना में वृद्धि करते हुए चौदह वर्ष व्यतीत हुए। उसके बाद पुत्र को व्यवसाय आदि सौंपकर निवृत्ति जीवन से पौषधशाला में रहते हुए उत्तम साधना करने लगे। शुद्ध अध्यवसाओं से उन्हें अवधिज्ञान उत्पन्न हो गया।

श्रमणोपासक महाशतक की पत्नी रेवती अत्यन्त भोग-पिपासु, मांसलोलुपी और ईर्ष्यालु थी। उसने अपनी बारह सपत्नियों को शस्त्र एवं विष प्रयोग करके मार डाला था। मद्य-मांस के सेवन से उसकी वासनाएँ प्रबल हो गई थीं। एक बार महाशतक पौषधशाला में ध्यानस्थ थे। उस समय मद्य के नशे में चूर होकर वह बड़ी निर्लज्जता के साथ कामयाचना करने लगी। महाशतक को ध्यान में स्थिर देखकर उसे क्रोध आया और दुष्ट वचन बोलने लगी। पत्नी के इस निर्लज्ज और दुष्ट व्यवहार से महाशतक के मन में क्षोभ पैदा हुआ। उन्होंने कहा–"मैं अपने ज्ञानबल से कहता हूँ कि आज से सातवें दिन तेरी मृत्यु हो जायेगी। तू अलस रोग से पीड़ित होकर अत्यन्त वेदना और दुर्ध्यान के साथ मृत्यु को प्राप्त करके प्रथम नरक में उत्पन्न होगी।" पति के मुँह से यह बात सुन भय और उद्वेग से वह व्याकुल हो उठी। सातवें दिन अत्यन्त पीड़ा और शोक के साथ उसने प्राण त्याग दिए। भगवान् महावीर ने गणधर गौतम को भेजकर महाशतक श्रावक को सूचित किया कि तुमने बड़े ही कर्कश वचनों के साथ पत्नी की तर्जना की और उसके हृदय को चोट पहुँचाई है, अतः तुम अपनी भूल का प्रायश्चित्त करो। उसने प्रायश्चित्त किया और अन्त में संलेखना-संथारा के साथ समाधिमरण प्राप्त कर स्वर्ग प्राप्त किया।

(9) नंदिनीपिता श्रावक

श्रावस्ती नगरी में समृद्धिशाली नन्दिनीपिता नामक गाथापति रहता था। वह भी आनन्द के समान गुण सम्पन्न था एवं समाज में प्रतिष्ठित था। उसकी सम्पत्ति कुल बारह करोड़ स्वर्ण मुद्राओं में थी, जो तीन विभागों में विभक्त थी। पशुधन भी 40 हजार की संख्या में था। उसकी पत्नी का नाम अश्विनी था।